आचार्य चक्र मण्डल विधान

रचयित्री
क्षु. रत्न 105 श्री सिद्धश्री माता जी

प्रकाशक
अखिल भारतवर्षीय दिगम्बर जैन विद्वत महासंघ
भारत

कृति : आचार्य चक्र मण्डल विधान

प्रेरणा एवं आशीष : सारस्वत कवि श्रमणाचार्य
108 श्री विभव सागर जी महाराज

रचयित्री : क्षुल्लिकारत्न 105 सिद्धश्री माता जी

सम्पादक : प्रतिष्ठाचार्य पं. अखिलेश शास्त्री 'रमगढ़ा'

संस्करण : प्रथम 2018

आवृत्ति : 1500 प्रतियाँ

पुण्यार्जक : श्री दिग. जैन शांतिनाथ समवशरण
नंदीश्वर द्वीप जिनालय समिति,
शांति विहार, शाहगढ़

प्राप्ति स्थान : परमपूज्य आचार्य श्री 108 विभवसागर जी संघस्थ
साधु वृन्द

मुद्रक : विकास आफसेट, भोपाल

आशीर्वाद

'आचार्य चक्र विधान' की रचयित्री नवोदिता कवयित्री सिद्धश्री माताजी ने अन्तः प्रेरणा से प्रेरित हो आचार्य भक्ति से ओत-प्रोत यह विधान रचने का पवित्रतम प्रयास किया है।

यह गुणानुबन्धिनी कविता स्वपर कल्याणकारी होने से भव्य जीवों को शुभोपयोग का प्रबल उपाय है। तथा संवर-निर्जरा का सफल साधन है।

'वन्दे तद्गुण लब्धये' के सूत्र को आपने प्रस्तुत कृति में साकार किया।

आपका प्रयास संस्तुत्य और सराहनीय है। आपका गुणानुराग निरन्तर बढ़ता रहे। आपकी आत्मसाधना निराकुल निर्बाध हो मोक्षमार्ग यात्रा सफल हो।

हमारा बहुत आशीर्वाद
बोधि समाधिरस्तु.....।

आचार्य विभव सागर
पार्श्वनाथ जयन्ती
२०१७, (महा:)

आशीर्वाद

आपने अपनी सिद्ध लेखनी से उन शुद्ध चारित्र के धारी आचार्यों के 36 मूलगुणों में एक-एक मूलगुण का वर्णन बड़े ही सुन्दर रूप से किया है वास्तव में सभी सिद्धाचार्यों का परोक्ष रूप से आशीर्वाद लिया है। और सब श्रावको को आचार्य भगवन्तों से परिचय कराकर वास्तव में महामंत्र णमोकार मंत्र के तीसरे पद का ही विधान लिखा है।

ऐसे ही जिनधर्म ध्वजा को अपनी लेखनी से फहराते रहें।

23/11/2017 **ऐसी मंगलकामना**
झिरपी ग्राम बिहार प्रवास..... **आपकी गुरु बहन**
शेष शुभ..... **श्रमणी ओम् श्री माता जी**

समर्पण की शक्ति

क्षु. अहिंसा श्री

हमने माताजी को देखा कि माताजी आचार्य महाराज के प्रति इतना समर्पण रखती है कि शब्दों में कहा नहीं जा सकता। उसी समर्पण का फल है जो ''आचार्य चक्र विधान''। हम तो यही कामना करते हैं कि माताजी सिद्ध श्री का जैसा नाम है वैसे ही सिद्ध शिला को पावें और गुरुओं की भक्ति में हमेशा तत्पर रहें।

शेष शुभ
शान्ति विहार, शाहगढ़

आचार्य भक्ति

क्षु. सिद्धश्री

भगवं अणुग्गहो मे, जंतु सदेहोत्व पालिदा अम्हे।
सारण वारण पडिचो दणाओ, धण्णा हु पावेंति॥

भगवती आ. 379

हे आचार्य भगवन्! आपका हम पर बड़ा अनुग्रह है, आपने आपने शरीर की तरह हमारा पालन किया है। तथा 'यह करो' और 'यह मत करो' इत्यादि हितकारी शिक्षा दी। भाग्यशाली ही ऐसी शिक्षा पाते हैं।

हे भगवन्! आपने हमें चिंतन-चिंतन शैली दे हृदय दिया। उपदेश सुनाकर कान दिए। शास्त्र स्वाध्याय में लगाकर आँखें प्रदान की हैं। आपकी आज्ञा और हितोपदेश सुनकर भी हमने जो अज्ञान, प्रमाद और रागवश प्रतिकूल आचरण किया। उसके लिए हम आपसे क्षमा माँगते हैं।

हे गुणाचार्य भगवन्! आपके वचन हमारे लिए परम मंगल कारक हैं। आज मैं गुरु गुण स्मरण कर आनन्दाश्रु से आनन्दित और पुलकित हूँ। हे संयम प्राण प्रदाता! परम श्रद्धेय परमाराध्य परमपिता छोटा सा भी गुण सत्पुरुषों को पाकर महान हो जाता है। जैसे की तेल की बूँद पानी में फैलकर महान हो जाती है। जैसे की तेल की बूँद पानी में फैलकर महान हो जाती है। उसी तरह मैं आप एवं आपके सान्निध्य को पाकर विस्तार को प्राप्त हुआ हूँ। हमारी आत्मोन्नति के मूल आधार एकमेव आपके पावन चरण और पावन वचन हैं।

हे आचार्य देवता! आपका वर्णवाद् (यशोगान) ही सम्यग्दर्शन की आराधना है आपके गुणों का जानना, स्मरण करना सम्यग्ज्ञान की आराधना है। आपकी चर्या का ग्रहण सम्यक् चारित्र को आराधना है। आपकी वैयावृत्ति ही तप की आराधना है। तथा चार आराधना का फल अरिहंत-सिद्ध पद की प्राप्ति है। अतः आपका गुणानुवाद करना हमें भगवान बनने की कला प्रदान करता है।

जो सुख का साधन है वह ग्रहण किया जाता है। जो दुःख का कारण हो

वह त्याग दिया जाता है। अतः मैंने आपको ग्रहण कर लिया, एवं परिवार, संसार को त्याग दिया है।

हे आचार्य परमेष्ठी! आपने चिरकाल से अभी तक हमारा पथ प्रशस्त किया। आपकी कृपा से ही हम मोक्षमार्ग में आ सके और चल रहे हैं भगवन्! आपके चरणों की उपासना करके ही आत्म कल्याण का उपाय सफल करेंगें।

धण्णा ते भयवंता, दंसण णाणग्ग पवर हत्थेहिं।
विसय मयर हर पडिया, भविया उत्तारिया लोए॥

वे आचार्य भगवन्! धन्य हैं जिन्होंने दर्शन और ज्ञान रूपी दो हाथों के द्वारा, विषय सागर में पतित प्राणियों को पार लगाया। ऐसे आचार्य देव! की भक्तित्रय पूर्वक वन्दना करता हूँ।

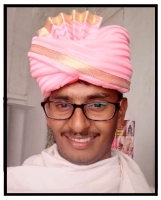

सम्पादकीय

पंचाचारसमग्गापंचिंदियदंतिदप्पणिद्दलणा।
धीरा गुणगंभीरा आइरिया एरिसा होंति।।

आचार्य कुन्दकुन्द स्वामी की इस गाथा का संपूर्ण सार परमपूज्य आचार्य विभव सागर जी महाराज की सुयोग्य शिष्या क्षुल्लिका रत्न 105 सिद्ध श्री माताजी ने आचार्य चक्र मंडल विधान में छंद बद्धअवतरित कर दिया है। माताजी की लेखनी सिद्धहस्त है जिन्होंने अपने उद्गारों के सागर को लघु कृति रूप गागर में समाहित कर दिया है। गुप्तित्रय, पंचाचार, दशधर्म, बारह तप का वर्णन इस ढंग से किया है मानो काव्य कुशलता में माता जी ने महारथ हासिल किया हो। कृति को पढ़कर कोई भी विज्ञ पुरूष यह नहीं कह सकता कि यह किसी नवोदित कवि की रचना है अपितु शब्दों के चयन एवं छंद के माध्यम से ऐसा ही प्रतीत होता है कि यह कृति एक मंझे हुये काव्य कोमलता के अधिपति के द्वारा लिपीबध्द की गई हो।

जिन भावनाओं के साथ इस कृति का सृजन किया गया है यदि हम उन भावों का आंशिक रूप भाव बनाकर यह विधान रचते हैं तो निश्चित मानो असंख्यात गुणे कर्म निर्जरा के साथ चारित्र मोहनीय कर्म के क्षय में रामबाण औषधि का काम करेगा। जिन महानुभावों ने इस अनुपम कृति का प्रकाशन सौजन्य प्राप्त किया है उनके ऐसे उत्कृष्ट भाव जिन श्रुत सेवा के सदैव बनते रहें।

मैं आभारी हूं आदरणीय **पं. नेमिचंद्र जी विद्यार्थी** का जिन्होने **भा. दि. जै. विद्वत महासंघ** के तत्वावधान में इस कृति को प्रकाशित किया। यह कृति समूचे विश्व में कुशलता आरोग्यता का विस्तार करती हुई कर्म क्षय का हेतु बने, इसी पावन पुनीत भावनाओं के साथ सादर समर्पित।

णमो लोए सव्व आइरियाणं

सम्पादक
प्रतिष्ठाचार्य पं. अखिलेश शास्त्री
(रमगढ़ा) शाहगढ

आचार्य परमेष्ठी विधान

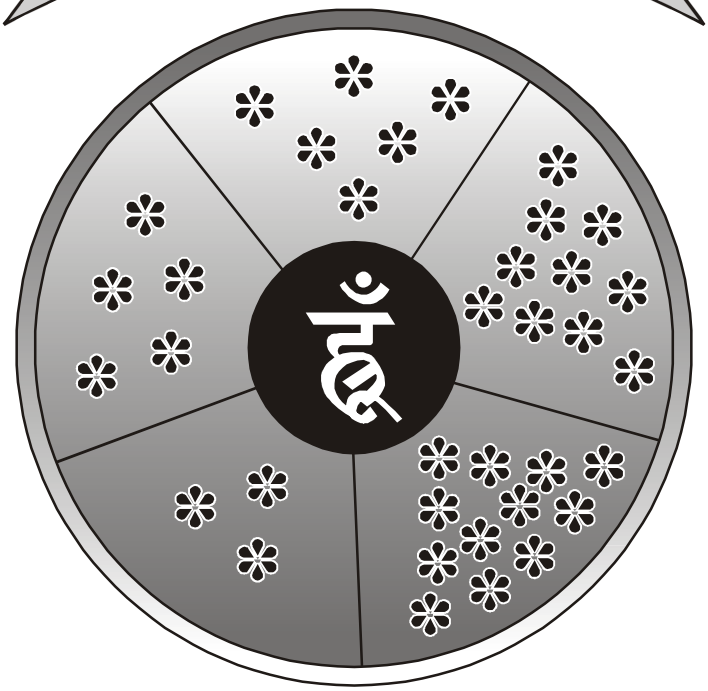

गुरुपूजा

समता भाव को धारण करना, हमें सिखाओ जी।
मन मन्दिर की हृदय वेदी पर, गुरुवर आओ जी॥
कैसा मन हो कैसी वेदी, यह सिखलाओ जी।
मोक्ष मार्ग पर बढ़ता जाऊ, राह बताओ जी॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं सर्व सूरि परमेष्ठिन्! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् इति आह्वानम्।
ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं सर्व सूरि परमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।
ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं सर्व सूरि परमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण्।

स्थापना

जन्म जरा मृत रोग सताये, उन्हे मिटाओ जी।
मोक्षमार्ग पर बढ़ाता जाऊँ, साथ निभाओं जी॥
शीतल जल है निर्मल मन है, मम मन आओ जी।
मन हो शीतल मन हो सुन्दर, यह सिखलाओ जी॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं सर्व सूरि परमेष्ठिभ्यः जन्म जरा मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा...।

चन्दन को जब घिसता जाऊ, स्वच्छ सुगन्धी हो।
गुरु चरणो में रहने जाऊँ , मन की शुद्धि हो॥
चन्दन को जब लगा माथ पर, शीतलता मिलती।
गुरु चरणों में रह जाने पर, ज्ञान कला मिलती॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं सर्व सूरि परमेष्ठिभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा...।

अखण्ड अक्षत लेकर गुरुवर, तुम्हे चढ़ाऊँ जी।
अक्षय पद कैसे मै पाऊँ, कला सिखाओ जी॥
ज्ञान हो अक्षय पद हो अक्षय, यह सिखलाओ जी।
मेरे गुरुवर आकर मुझको, ज्ञात कराओ जी॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं सर्व सूरि परमेष्ठिभ्यो अक्षय पद प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा...।

फूलों की खुशबू को पाकर, भौरें आते है।
फूलों के रस को वे पीकर, प्यास बुझाते है॥
गुरुवर के चरणों मे आकर, ज्ञान कला पा लूँ।
सम्यक् ज्ञान कला बल पर, व्रत संयम में पा लूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं सर्व सूरि परमेष्ठिभ्यः कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा...।

जन्म-जन्म से मैने गुरुवर, सब पुद्गल खाये।
पुद्गल पिंडो को खा-खाकर, तृप्ति नहीं पाये॥
चेतन की अब क्षुधा जगी है, उसे बुझाओ जी।
जीव सदा जयवन्त रहे वह, कला सिखाओ जी॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं सर्व सूरि परमेष्ठिभ्यः क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

राग किया है द्वेष किया है, मोह के आने पर।
मिथ्या पथ का ज्ञान हुआ है, मोह के आने पार॥
मोह के कारण चौरासी के, चक्कर खाया हूँ।
मोह हटाने मेरे गुरुवर, ओट में आया हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं सर्व सूरि परमेष्ठिभ्यः मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा...।

जो-जो मैंने कर्म किये हैं, कर्मबन्ध होता।
कर्म को कर्म समझने हेतू, ज्ञान बीज बोता॥
कर्म निर्जरा पाठ सिखाओ, मेरे गुरुवर जी।
अष्ट कर्म का नाश कराओ, मेरे गुरुवर जी॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं सर्व सूरि परमेष्ठिभ्यो अष्टकर्म दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा...।

हरे-भरे इन फल को लेकर, तुम्हे चढ़ाऊँगा।
मोक्ष महल को मै पा जाऊ, भावना भाऊँगा॥
श्रद्धा बिन भी मोक्ष कहाँ है, कुन्दकुन्द कहते।
श्रद्धा भाव जगाने हेतु गुरु, चरण रहते॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं सर्व सूरि परमेष्ठिभ्यः महामोक्षफल प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा...।

अष्ट द्रव्य मिल जाने को सब, अर्घ यहाँ कहते।
दर्श ज्ञान चारित्र मिले तो, पद अनर्घ कहते॥
सद् भावों का अर्घ चढ़ाऊँ, यह स्वीकारो जी।
अनर्घ पद को प्राप्त करूँ मै, गुरुवर तारो जी॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं सर्व सूरि परमेष्ठिभ्यो अनर्घ पद प्राप्तये अर्घं निर्वपामीति स्वाहा...।

जयमाला

विभव सागर गुरुदेव को, नमन करूँ शत् बार।
नमन-नमन से मनन हो, मन में शुद्ध विचार॥

गुरु महिमा को मैं गाऊँ सदा।
गुरु पूजा को मैं रचाऊँ सदा॥
गुरु के गुण को गाते जाऊँ।
गुरु के जैसे बनते जाऊँ॥
गुरु के गुण को जो गाते हैं।
गुरुता निज में प्रकटाते हैं॥
गुरु भक्ति में जो शिष्य लगे।
वे मोक्ष मार्ग मे सदा लगे॥
गुरु वचनों पर श्रद्धा करते।
वे शिष्य सुखी जीवन जीते॥
गुरु महिमा को जो गाते हैं।
जीवन में त्याग बढ़ाते हैं॥
मन अर्पित हो, तन अर्पित हो।
सेवा में वचन समर्पित हो॥
गुरु चरणों में अर्पित हों।
संयम दो भाव समर्पित हों॥
जब तक इस तन में श्वास रहे।
गुरु सेवा में मम माथ रहे॥
गुरु आज्ञा ही मम जीवन हो।

आज्ञा की नहीं अवज्ञा हो॥
गुरु आज्ञा से जो नियम धरें।
वे उर्ध्व गति को गमन करें॥
जो शिष्य गुरु की विनय करें।
वे गुरु विद्या को प्राप्त करें॥
सब जीव आपको गुरु कहें ।
पर गुरु मात्र ही शिष्य कहें॥
आम्र वृक्ष की छाँव तले।
शीतल छाया भी तुम्हें मिले॥
गुरु चरणों में जो रहते हैं।
संयम की रक्षा करते हैं॥
सम्यग्दर्शन प्रभु दर्शन से।
सद्ज्ञान मिले श्रुत वर्णन से।
सम्यक् चारित्र यदि पाना हैं।
तो गुरु चरणों में आना हैं॥

पूजा को हमने किया, पूज्य पुरुष की आज।
संयम भाव सदा रहे, रखना गुरु जी लाज॥
सिद्धों के सम आप हो, सिद्ध करो सब काम।
सिद्ध श्री की भावना, दो सिद्धालय धाम॥
गुरु दर्शन की आस है, गुरु दर्शन की प्यास।
गुरु चरणों में नित रहूँ, ज्यों रवि में परकाश।

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं सर्व सूरि परमेष्ठिभ्यः जयमाला पूर्णार्घं...।

परम पूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
सदाचार की मिले सम्पदा, चरणो अर्घ चढ़ाता हूँ॥

''पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्''

विधानारम्भ

स्थापना

रत्नत्रय धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
रत्नत्रय को प्राप्त करूँ मैं, यही भावना भाता हूँ॥

जैसे जल में कमल अहो!।
वैसे मुझमें आप रहो॥
रत्नत्रय धारी मुनिवर!।
शाश्वत सुखकारी गुरुवर।
संयम पथ के नेता हो।
कर्म मलों के जेता हो॥
स्वपर जीव कल्याणी हो।
शब्द शब्द जिनवाणी हो॥
आओ आओ गुरुवर जी॥
संयम भाव जगाओ जी॥
भाव भरा यह आमंत्रण।
स्वीकारो मेरे भगवन्!
मन वच तन करता वंदन।
हृदय कमल से अभिनंदन
तीन ऊन नव कोटि श्रमण!।
मंगल, उत्तम आप शरण!॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
सदाचार की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं शताष्ट सर्व सूरि परमेष्ठिन्! अत्र अवतर-अवतर संवौषट् इति आह्वानम्।

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं शताष्ट सर्व सूरि परमेष्ठिन्! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः स्थापनम्।

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं शताष्ट सर्व सूरि परमेष्ठिन्! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् सन्निधिकरण्।

प्रथम वलय

1. मन गुप्ति

रत्नत्रय धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
रत्नत्रय को प्राप्त करूँ मैं, यहीं भावना भाता हूँ॥

मन को वश में आप करें।
मन के वश में नहीं रहें॥
मन में सदा विचार करें।
तत्वों पर श्रद्धान धरें॥

समयसार के सार गहें।
कुन्दकुन्द के वचन कहें॥
मन की रक्षा करते हो।
जन-वाणी से बचते हो॥

जिनवाणी के चिन्तन से।
जिनवाणी के मन्थन से॥
अशुभ प्रवृत्ति रुक जाती।
जिनवाणी में मति जाती॥

गज को वश में करने को।
मन को वश में करने को॥
अंकुश सदा सहाई है।
गुरु महिमा गुण गाई है॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
सदाचार की मिले सम्पदा, चरणों अर्घ चढ़ाता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं मनो-गुप्ति साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्योः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

2. मन गुप्ति

रत्नत्रय धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
रत्नत्रय को प्राप्त करूँ मैं, यहीं भावना भाता हूँ॥

वचनों के दो भेद कहे।
सत्य असत्य प्रभेद कहे॥
जो जैसा दिख जाता है।
सत्य नहीं कहलाता है॥

साधु-जनों में कहा वचन।
हितकारी आगम प्रवचन॥
जिनभाषित सर्वज्ञ कथन।
कहलाता वह सत्य वचन॥

कारण के मिल जाने पर।
वाणी के खिर जाने पर॥
भव्य जीव कल्याण करें।
गुरुवाणी का पान करें॥

तीर्थंकर की वाणी है।
वचनों में जिनवाणी है॥
वचन गुप्ति को पाल रहे।
जीवन सदा सम्भाल रहे॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
सदाचार की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं वचन गुप्ति-साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्योः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

3. काय गुप्ति

रत्नत्रय धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
रत्नत्रय को प्राप्त करूँ, मैं यही भावना भाता हूँ॥

कायोत्सर्ग जब करते हैं।
बाहुबली सम लगते है॥
काय गुप्ति को पाल रहे।
निज के भाव सम्हाल रहे॥

निज में कैसे जाना है।
निज को कैसे पाना है॥
कायगुप्ति को आप धरें।
सिद्धों का नित ध्यान करें॥

पिंजरे में तोता रहता।
पिंजरे का वह ना होता॥
काया अन्दर जीव रहे।
काया का वह नहीं रहे॥

काय गुप्ति को पालो तुम।
जीव दया व्रतधारो तुम॥
जिनवाणी मैया कहती।
गुप्ति से मुक्ति मिलती॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
सदाचार की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं कायगुप्ति-साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्योः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

महाअर्घ

तीन गुप्ति के धारी गुरुवर, तुमको सादर नमन करूँ।
यही भावना भाऊ गुरुवर, सिद्धालय को गमन करूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं त्रयगुप्ति-साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्यः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

द्वितीय वलय

पंचाचार

सूरि गुरु आराधना सहित पंच आचार।
पुष्पाञ्जलि अर्पण करुं-द्वितीय वलय मझार॥

अथ पंचाचार सहिताचार्य परमेष्ठि विधान मध्ये द्वितीय वलयो परि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

1. दर्शनाचार

रत्नत्रय धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
रत्नत्रय को प्राप्त करूँ मैं, यही भावना भाता हूँ॥

पंचाचार को पालें जो।
श्रमण संघ संचालें जो॥
ऐसे गुरु को वन्दन हो।
चरण कमल अभिनन्दन हो॥

दर्शनाचार को पाल रहे।
जीवन उसमें ढाल रहे॥
मोक्षमार्ग की है अर्चा।
मुनियों की उत्तम चर्या॥

गुण निःशंकित पाल रहे।
जग कल्याण प्रधान रहे॥
अचल हिमाचल से तुम हो।
श्रद्धा कभी न विचलित हो॥

वात्सल्य के स्वामी हो।
जिन आगम-आनुगामी हो॥
उपगूहन को पाल रहे।
दोष कथन में मौन रहे॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
सदाचार की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं दर्शनाचार साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्योः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

2. ज्ञानाचार

रत्नत्रय धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
रत्नत्रय को प्राप्त करूँ मैं, यही भावना भाता हूँ॥

कुन्दकुन्द से वाँच रहे।
जिनवाणी को साँच कहें॥
ग्रन्थों के अनुगामी हो।
निर्ग्रन्थों के स्वामी हो॥

शब्दाचार कहाते हो।
अर्थ वही बतलाते हो॥
गुरुवाणी को आप कहे।
गुरुवाणी की विनय करें॥

द्रव्य क्षेत्र को देख रहे।
गुरुवाणी को लेख रहे॥
शुद्धि भाव जगाने को।
विनयाचार प्रकटाने को॥

शस्त्रों से जो सदा बचे।
सद् शास्त्रों में सदा रचे॥
शिव मारग के स्वामी हो।
श्रमण पति अभिरामी हो॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
सदाचार की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं ज्ञानाचार साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्योः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

3. चारित्राचार

रत्नत्रय धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
रत्नत्रय को प्राप्त करूँ मैं, यही भावना भाता हूँ॥

पंच महाव्रत वाले हो।
पांच समितायाँ पाले हो॥
तीन गुप्ति के धारी हो।
गुरुवर जी अविकारी हो॥

व्रत ही व्रती बनाता है।
जिनवाणी से नाता है॥
सम्यक् चारित्र जिनका है।
स्वर्गों में भी चर्चा है॥

ऐसे जम्बू स्वामी को।
नमस्कार शिव गामी को॥
सेठ सुदर्शन ने पाला।
जीवन को उसमें ढाला॥

चारित्र धारी गुरुवर जी।
चारित्र हमको दे दो जी॥
और नहीं कुछ माँग रहे।
गुरु चरणों के दास रहे॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
सदाचार की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं चारित्राचार साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्योः अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

4. तपाचार

रत्नत्रय धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
रत्नत्रय को प्राप्त करूँ मैं, यहीं भावना भाता हूँ॥

इच्छायें जब रुक जायें।
तप का नाम वही पायें॥
अंतरंग के तप स्वामी।
गुरु चरणों में प्रणमामी॥

आतम के जो पास रहे।
सदा सदा उपवास करे॥
मन के विषय कषायों का।
त्याग करें संचारो का॥

ज्ञान का भोजन करते हो।
ज्ञानी के संग रहते हो॥
ऊनोदर को पाला है।
ऊनोदर ने पाला है॥

दीक्षा को तुम धारे हो।
भिक्षा को तुम जाते हो॥
ऐसे सन्त दिगम्बर हो।
जिनवाणी के नन्दन हो॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
सदाचार की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं तपाचार साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

5. वीर्याचार

रत्नत्रय धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
रत्नत्रय को प्राप्त करूँ मैं, यही भावना भाता हूँ॥

जिन भक्ति में सदा लगे।
निज शक्ति से त्याग करे॥
भक्ति से शक्ति आती।
जिनवाणी यह बतलाती॥

दृष्टि नहीं बदलना है।
दृष्टिकोण बदलना है॥
ऐसा गुरुवर जी कहते।
व्रत संयम में ही रहते॥

वीर व्रतों को पाला है।
वीर्याचार सम्भाला है॥
वीर कहें अतिवीर कहें।
महावीर गम्भीर कहें॥

छिप-छिप कर जो पाप करें।
छिपकली की पर्याय धरें॥
शक्ति नहीं छिपाना हैं।
वीर्याचार को पाना हैं॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
सदाचार की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं वीर्याचार साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

महाअर्घ

पंच महाव्रतों को गुरुवर कितनी दृढ़ता से पाल रहे।
उतनी दृढ़ता हमको भी दो, निज आतम को श्रृंगार रहे ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं त्रयगुप्ति-साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्याः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

तृतीय वलय

षटावश्यक

षटआवश्यक पालते, गुरु दृढ़ता के साथ।
तृतीय वलय पुजा करुं, पुष्प गुच्छ ले हाथ॥

अथ षटावश्यक सहिताचार्य परमेष्ठि विधान मध्ये तृतीय वलयोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

1. समता

कोई तुम्हारी करे प्रशंसा, कोई गाली देता है।
कोई तुमको हार चढ़ाएँ, कोई काँटे बोता है॥
समता में तुम रत रहते हो, नहीं प्रशंसा सुनते हो।
आत्म केन्द्र में स्थिर हो करके, निज भावों को बुनते हो॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं समता आवश्यक सहिताचार्य परमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि.।

2. स्तुति

तीर्थंकर की करे स्तुति, तीर्थंकर सम होने को।
गौतम ने ज्यों करी स्तुति, महावीर सम होने को॥
समन्तभद्र से भद्र भाव है, भद्रबाहु से गुरु लगे।
भगवन की संस्तुति लखकर, अशुभ भाव भी शीघ्र भगे॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं स्तुति आवश्यक सहिताचार्य परमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि.।

3. वन्दना

सिद्धों के सम होने भगवन्, वन्दन बारम्बार करें।
श्रुतवाणी के सम होने को, नित्य शास्त्र अभ्यास करें॥
गुरु भक्ति गुरु गुरुता देती, शुभ भावों अनुराग धरूँ।
करें वन्दना आप मुनिश्वर, मैं तव चरणों जाप करूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं वन्दना आवश्यक सहिताचार्य परमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि.।

4. प्रतिक्रमण

निज से निज का मिलन हुआ जब, प्रतिक्रमण का भाव जगा।
निज से जिन सम हो जाने को,शुद्धि का शुभ भाव जगा॥
जिन चर्या में लगे दोष जो, तत्क्षण ही तुम त्याग करें।
सब दोषों को दूर करें जो, तीर्थंकर सम हमें लगें॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं प्रतिक्रमणावश्यक सहिताचार्य परमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि.।

5. प्रत्याख्यान

दोषों से तुम बचने हेतु, प्रत्याख्यान को रोज करें।
प्रत्याख्यान का पाठ सिखाने, शिष्यों को तुम साथ धरें॥
भूत भविष्य का निर्णय करके वस्तु का तुम त्याग करें।
शुद्धातम सम हो जाने को आत्म शुद्ध विचार करें॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं प्रत्याख्यानावश्यक सहिताचार्य परमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं नि.।

6. कायोत्सर्ग

काया में जो रम जाते हैं, कायर सम वे हो जाते।
काया से ममता को त्यागे, कायोत्सर्ग सदा ध्याते॥
आर्त्त रौद्र का त्याग करें जब, ओम् मन्त्र का जाप करें।
श्री जिनगुण का चिन्तन करते, अरिहन्तों का ध्यान करें॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं कायोत्सर्गावश्यक सहिताचार्य परमेष्ठिभ्यो-ऽर्घ्यं नि.।

महाअर्घ

द्वार-द्वार का ना रहूँ, आऊँ तेरे द्वार।
षट्अवश्यक पालकर, खोलूं मुक्ति द्वार॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं षट्वश्यकावश्यक सहिताचार्य परमेष्ठिभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

चतुर्थ वलय

दस धर्म

निजस्वभाव से उपजते, क्षमा आदि दश धर्म।
चौथे वलय पुष्पार्पणा, काटे आठो कर्म॥

अथ दसधर्म धारकाचार्य परमेष्ठि विधान मध्ये चतुर्थ वलयोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

1. उत्तम क्षमा

दवानल के आ जाने पर, सघन वृक्ष भी जल जाते।
क्रोध भाव के आ जाने पर, स्वभाव भाव भी जल जाते॥
क्षमावीर का आभूषण है, क्षमा मूर्ति हे गुरुवर जी।
क्षमा जगाओ, क्रोध भगाओ, क्षमादान दो ऋषिवर जी॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं उत्तम क्षमाधर्म धारकाचार्य परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं नि.।

2. उत्तम मार्दव

ज्ञान बहुत है, ध्यान बहुत है मान नहीं कीना।
इसी भाव को तज कर तुमने, मुनि दीक्षा लीना॥
मान कषाय को छोड़ने वाले, महापुरुष तुम हो।
सच कहता हूँ मेरे, भगवन महावीर सम हो॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं उत्तम मादर्व धारकाचार्य परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं नि.।

3. उत्तम आर्जव

सदा सरलता, सदा सहजता, आर्जव सिखलाती।
भीतर की भगवान आत्मा, आर्जव दिखलाती॥
छल नहीं करते, निश्छल रहते गुरु आर्जवधारी।
निश्छलता के परम पुजारी शिवपथ अधिकारी।

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं उत्तम आर्जव धारकाचार्य परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं नि.।

4. उत्तम शौच

लोभ न करना, शुचिता धरना, संतोषी रहना।
मन पवित्रता, भाव शुद्धता, जीवन में धरणा॥
लोभ भाव को तुम भी त्यागो, गुरुवर जी कहते।
लाभ सदा जीवन में पाऊँ गुरु चरणों रह के॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं उत्तम शौच धारकाचार्य परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं नि.।

5. उत्तम सत्य

सावन आये बादल छाये, मोर सदा नचते।
गुरुवाणी को सुनने हेतु, भक्त सदा भजते॥
वाणी से तुम तीर्थ चलाते, तीर नहीं छोड़ें।
गुरुभक्ति को पढ़कर सब जन श्रद्धा गुण जोड़े॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं उत्तम सत्य धारकाचार्य परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं नि.।

6. उत्तम संयम

संयम की ऑक्सीजन लेकर, जीवन जीते हो।
असंयम के पाईजन का ऑपरेशन करते हो॥
वैद्यों के तुम वैद्यराज हो, प्रभेद ज्ञानी हो।
संयम के तुम भेद बताओ सम्यक्ज्ञानी हो॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं उत्तम संयम धारकाचार्य परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं नि.।

7. उत्तम तप

पतन मार्ग को छोड़ा तुमने, उत्तम तप कीना।
श्री गुरुवर के चरणों आकर, संयम व्रत लीना॥
श्री गुरुवर का तप तुम देखो, देव यहाँ आते।
उत्तम तप को प्राप्त करें, वे भाव यहाँ भाते॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं उत्तम तप धारकाचार्य परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं नि.।

8. उत्तम त्याग

जीयो और जीने दो जग, नारा जयवन्त रहे।
त्याग धर्म से जय होती है, जग भगवन्त कहे॥
राग भाव को त्यागा तुमने, नित विराग धारा ।
त्याग धर्म को धारण करके, निज को शृंगारा॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं उत्तम त्याग धारकाचार्य परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं नि.।

9. उत्तम अकिञ्चन

अहो अकिंचन! मेरा आतम, मैं निज गुणधारी।
नहीं परिग्रह, नहीं भवनग्रह, निज परिणतिधारी॥
मूर्च्छाभाव तजा है तुमने, जब से घरछोड़ा।
मोक्षमार्ग से निज स्वभाव से, ही नाता जोड़ा॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं उत्तम अकिञ्चन धारकाचार्य परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं नि.।

10. उत्तम ब्रह्मचर्य

बाल अवस्था में ही तुमने, ब्रह्मचर्य धारा।
ब्रह्मचर्य को धारण करके, सर्वसंघ ढाला॥
श्रमण संघ के नायक हो तुम, भाग्य विधाता हो।
भाग्य विधाता मेरे गुरुवर, शिवसुख साता दो।

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं उत्तम ब्रह्मचर्य धारकाचार्य परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं नि.।

महाअर्घ

ग्रन्थो के तुम ग्रन्थ राज हो, शास्त्रराज कहते।
धर्मी के तुम धर्मनाथ हो, धर्मनाथ कहते॥
दश धर्मों का पालन करते, हमें कराते हो।
धर्म किसे कहते हैं वह भी, हमें सिखाते हो॥

ॐ ह्रूँ णमो आईरियाणं उत्तम क्षमादि दशधर्म गुण धारकाचार्य परमेष्ठिभ्याः पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

पंचम वलय

बारह तप

कर्म निर्जरा हेतु ले, तपते बारह ताप।
बारह तप पूजा करुं- पूजत भागे पाप॥

अथ द्वादश तप सहिताचार्य परमेष्ठि विधान मध्ये पंचम वलयोपरि पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्।

1. अनशन तप

द्वादशतप धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
द्वादशतप को प्राप्त करूँ मैं, यही भावना भाता हूँ॥

क्रोध का अनशन करते हो।
मान का अनशन करते हो॥
लोभ का अनशन करते हो।
माया अनशन करते हो॥

भोजन का अनशन करके।
ज्ञान ध्यान को नित्य करें॥
अनशन तप को करते हो।
अनशन के संग रहते हो॥

अनशन धारी गुरुवर को।
भोजन त्यागी गुरुवर को॥
अनशन तप को प्राप्त करूँ।
गुरु चरणों में माथ धरूँ॥

यहीं तपस्या का फल है।
कठिन समस्या का हल है॥
तप से तुम सम्बोधन दे।
तपो धर्म उद्बोधन् दे॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
द्वादश तप की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं अनशन तप साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

2. अवमौदर्य तप

द्वादशतप धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
द्वादशतप को प्राप्त करूँ मैं, यहीं भावना भाता हूँ॥

अवमौदर्य को पाल रहे।
जीवन चर्या ढाल कहे॥
ब्रह्मचर्य की रक्षा हो।
अवमौदर्य जिसके संग हो॥

नींद नहीं जब आती है।
ज्ञानभावना लाती है॥
भूख से ज्यादा खाते जो।
जीवन को तड़फाते वो॥

परिणामों की शुद्धि हो।
मन में परम विशुद्धि हो॥
मन जब मन में लग जाये।
जीवन तभी बदल जाये॥

ऐसे ऊनोदर धारी।
परम दिगम्बर हितकारी॥
वीतराग की मूरत हो।
समता रस की सूरत हो॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
द्वादश तप की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं अवमौदर्य तप साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

3. वृत्ति परिसंख्यान तप

द्वादशतप धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
द्वादशतप को प्राप्त करूँ मैं, यही भावना भाता हूँ॥

व्रतमय तुम नित रहते हो।
व्रतियों से नित कहते हो॥
भोजन इच्छा को त्यागो।
महाव्रतों को तुम धारो॥

महाव्रती के इस तप की।
स्वर्गों तक में चर्चा थी॥
रोज आहार को जाते थे।
निराआहार आ जाते थे॥

देवो ने खुद आ करके।
चौंका स्वयं लगा करके॥
ऐसे संत मुनिश्वर को।
नमस्कार भी शत्-शत् हो॥

महावीर जब आते हैं।
चन्दन को दिख जाते हैं॥
अत्र-तत्र ये सुनते हैं।
कदम वही पर रुकते हैं॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
द्वादश तप की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं वृत्ति परिसंख्यान तप साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

4. विविक्त शैय्यासन

द्वादशतप धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
द्वादशतप को प्राप्त करूँ मैं, यहीं भावना भाता हूँ॥

एकान्त वास में रहते हो।
अनेकान्त को भजते हो॥
स्वार्थ सिद्धीं न चाह रखें।
सिद्धो के सम आप रहें॥

अध्ययन जो हो जाता है।
ध्यान वही बन जाता है॥
एकासन से रहते हो।
एकासन को करते हो॥

शैय्या का तुम त्याग करें।
संयम से तुम सदा रहें॥
ब्रह्मचर्य की सिद्धि हो।
ऐसी परम विशुद्धि हो॥

देव तुम्हारे रक्षक हैं।
व्रत के वे संरक्षक हैं॥
गुरु के चरणों आते हैं।
नमस्कार कर जाते हैं॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
द्वादश तप की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं विविक्त शैय्यासन तप साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

5. रस परित्याग तप

द्वादशतप धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
द्वादशतप को प्राप्त करूँ मैं, यही भावना भाता हूँ॥

जिनवाणी का रस पीना।
गुरुवर जी का है कहना॥
भोजन में तुम रस त्यागो।
ब्रह्मचर्य को नित पालो॥

समय-समय रस त्याग करें।
समय-समय में सदा लगें॥
समय सार की वाणी है।
कहती वह जिनवाणी है॥

ब्रह्मचर्य की रक्षा हो।
ऐसा नित तुम भोजन लो॥
शिष्यों को शिक्षा देते।
गुरु आज्ञा पालन करते॥

भरा कलश जब दिख जाये।
मंगलमय दिन हो जाये॥
संयम को तुम नित्य धरो।
जीवन मंगल मयी करो॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
द्वादश तप की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं रसपरित्यागतप साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

6. काय क्लेश तप

द्वादशतप धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
द्वादशतप को प्राप्त करूँ मैं, यहीं भावना भाता हूँ॥

बाह्य तपो से तपते हो।
अन्दर में तुम रहते हो॥
मन्दिर के अन्दर आना।
निज में आप समा जाना॥

मन मन्दिर में आ जाओ।
काय क्लेश से बच पाओ॥
रोग भंयकर हो जाये।
वे भी ड़िगा नहीं पाये॥

कर्मोदय को सहन करें।
उनसे कुछ तुम नहीं कहें॥
नमस्कार कर जाते हैं।
वापिस फिर नहीं आते हैं।

काय क्लेश तप सिखलाओ।
गुरुवर जी तुम आ जाओ॥
शुभ उपयोगी गुरुवर को।
नमस्कार भी सिर धर हो॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
द्वादश तप की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं कायक्लेश तप साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

7. प्रयाश्चित तप

द्वादशतप धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
द्वादशतप को प्राप्त करूँ मैं, यहीं भावना भाता हूँ॥

गुरु चरणों में जा करके।
प्रयाश्चित तप पा करके॥
अहनिश में जो दोष लगे।
उनका तुम प्रयाश्चित्त करे॥
दण्डों को वश में करता।
प्रयाश्चित दंड नहीं होता॥
दण्ड एक मजबूरी है।
प्रयाश्चित बहुत जरूरी है।
माँ स्नान कराती है।
देह शुद्ध कराती है॥
गुरु प्रयाश्चित तुम देते हो॥
मन शुद्धि कर देते हो॥
उत्तम वैद्य के होने पर।
औषधियों के मिलने पर॥
ग्रहण उसे कर जाते हैं।
समन उसे कर पाते हैं॥
परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
द्वादश तप की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं प्रयाश्चित तप साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

8. विनय तप

द्वादशतप धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
द्वादशतप को प्राप्त करूँ मैं, यहीं भावना भाता हूँ॥

विनय मोक्ष का द्वार कहें।
ऐसा गुरु उच्चार रहे॥
विनय जहाँ आ जाती है।
नय का ज्ञान कराती है॥

लोटे के झुक जाने पर।
जल भर उसमे आने पर॥
श्रेष्ठ पाठ सिखलाती है।
झुकना विनय कहाती है॥

गुरु ज्ञान जब देते हैं।
विनय भाव भर लेते हैं॥
चार विनय के भेद कहे।
ज्ञानादि प्रभेद कहे॥

विनय तुम्हारी श्वास रहे।
गुरु चरणों की आस रहे॥
शिष्यों का यह लक्षण है।
गुरु चरणों संरक्षण है॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
द्वादश तप की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं विनयतप साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

९. स्वाध्याय तम

द्वादशतप धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
द्वादशतप को प्राप्त करूँ मैं, यहीं भावना भाता हूँ॥

पढ़ते और पढ़ाते हो।
श्रमणाचार्य कहाते हो॥
जिन उपदेश जब देते हो।
अरिहन्तों सम लगते हो॥

जिनवाणी में आते हैं।
सात तत्व कहलाते हैं॥
जीव सदा घर पाते हैं।
सम्यग्दृष्टि कहाते हैं॥

बार-बार दोहराते हो।
याद सदा करवाते हो॥
चिन्ता से तुम दूर रहें।
चिन्तन को तुम सदा करें॥

चेतन को तुम चित्त धरो।
अचेतनो से दूर रहो॥
जिनवाणी को पालोगे।
निज परिणाम सम्हालोगे॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं स्वाध्याय तप साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

10. वैयावृत्ति तप

द्वादशतप धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
द्वादशतप को प्राप्त करूँ मैं, यहीं भावना भाता हूँ॥

वैयावृत्ति तप करते।
तप से सदा तपे रहते॥
वैयावृत्ति से पाला है।
संघ सदा सम्भाला है॥

चन्द्रगुप्त सी सेवा है।
सेवा में ही मेवा है॥
गुरु चरणों रहने आओ।
सेवा का मेवा पाओ॥

वृद्धो को तुम साथ रखें।
आचरण शुद्धविचार धरें॥
परम समाधि पाते हैं।
देव गति को जाते हैं॥

हंस सरोवर जाता है।
जब उसमें जल पाता है॥
संघ तभी बढ़ पाता है।
सेवा से जहाँ नाता है॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
द्वादश तप की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं वैयावृत्ति तप साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

11. व्युत्सर्ग तप

द्वादशतप धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
द्वादशतप को प्राप्त करूँ मैं, यही भावना भाता हूँ॥

बाह्य उपाधि त्याग किये।
अभ्यन्तर को साथ लिये॥
निःसंगता से रहते हैं।
निर्भयता से चलते हैं॥

राग-द्वेष जब जाता है।
मन हल्का हो जाता है॥
अंहकार का त्याग करें।
सरस्वती जी साथ रहें॥

सारस्वत तुम कहलाते।
सरस्वती के गुण पाते॥
सरस्वती सी वाणी है।
हृदय वसी जिनवाणी है॥

व्युत्सर्ग तप को पाल रहे।
संयम भाव सम्हाल रहे॥
निर्ग्रन्थो के सन्त रहो।
गुरुवर भी जयवन्त रहो॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
द्वादश तप की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं व्युत्सर्ग तप साहिताचार्य-परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

12. अनशन तप

द्वादशतप धारी गुरुओं को, सादर शीश झुकाता हूँ।
द्वादशतप को प्राप्त करूँ मैं, यहीं भावना भाता हूँ॥

श्रुत अध्ययन कर पाओगे।
ध्यान कला पा जाओगे॥
सम्यग्दर्शन अच्छा है।
मोक्ष मार्ग ही सच्चा है॥

जीव तत्व का ध्यान धरें।
जीव तत्व श्रद्धान करें॥
आर्त्त रौद्र से दूर रहे।
धर्म ध्यान भरपूर रहे॥

मन में शुद्ध विचार करें।
जिनमुद्रा शृंगार करें॥
शुभ उपयोग जगाओगे।
मोक्ष महल को पाओगे॥

काष्ठ मध्य ईंधन रहता।
देह मध्य भगवन रहता॥
नित आतम परआतम है।
जिनआगम परमागम है॥

परमपूज्य आचार्य देव की, गुण गाथायें गाता हूँ।
द्वादश तप की मिले सम्पदा, मन मंदिर पथराता हूँ॥

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं अनशन तप सहिताचार्य परमेष्ठिभ्यो ऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

* जयमाला *

दोहा

गुण वर्णन कैसे करूं-सूरि गुण की खान।
इस विधान की पूर्णता हो सबका कल्याण॥

श्रमण संघ के नायक गुरुवर।
लायक हो तुम ज्ञायक गुरुवर॥
दीक्षा के तुम दायक गुरुवर।
मन मन्दिर के धारक गुरुवर॥
जिनवाणी के लायक गुरुवर।
जिनवाणी के पालक गुरुवर॥
तीन गुप्ति के धारक गुरुवर।
पंचाचार प्रपालक गुरुवर॥
षट आवश्यक साधक गुरुवर।
दश धर्मों के मालिक गुरुवर॥
बारह तप आराधक गुरुवर।
जैन धर्म संचालक गुरुवर॥
यह गुण पाने में ध्याऊंगा।
भाव गुरु चरणों भाऊंगा॥
समयसार का सार है गुरुवर।
नियमसार का नियम है गुरुवर॥
मुलाचार आचार हैं गुरुवर।
आगम शास्त्र पुराण है गुरुवर॥

गुरुवर सम्यक बुद्धि दो, सम्यक शुद्धि हेतु।
भाव विशुद्धि प्रभू रहे।, आतम सिद्धि हेतु।

ॐ ह्रूँ णमो आइरियाणं षटत्रिशत् गुण सहिताचार्य परमेष्ठिभ्याः जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा...।

* आरती *

जय-जय गुरुवर भक्त पुकारे, आरती मंगल गाये।
करके आरती विभव सागर जी की मोह तिमिर नश जाये॥
गुरुवर के चरणों में नमन-2

किसनपुरा में जन्म लिया है, धन्य हैं गुलाब बाई।
लखमीचंद जी पिता तुम्हारे हर्षित मन मुस्काई॥
नगर में सब जन मंगल गाये
नगर में सब जन मंगल गाये, फूले नहीं समाये।
करके आरती विभवसागर जी की.....
सूरज सा था तेज आपका, नाम अशोक था पाया।
बीता बचपन आई जवानी, घर में मन अकुलाया॥
ये सब कुछ तो नाशवान है,
ये सब कुछ तो नाशवान है, भाव वैराग्य जगाया
करके आरती विभवसागर जी की.....
विराग सागर गुरुवर ने ये दीक्षा दे उद्धारा।
देख कर मन की निर्मलता को, विभव सागर नाम पुकारा॥
चारित्र रथ पर चढ़ गये गुरुवर
चारित्र रथ पर चढ़ गये गुरुवर, मुक्ति बाट निहारे।
करके आरती विभवसागर जी की.....
धन्य है जीवन धन्य है तन-मन मिलकर जो गुण गाएँ।
स्वर्ग सम्पदा सब कुछ पाकर मनुज जन्म फल पाएँ॥
दिव्य ज्ञान तुमसे हम पाकर
दिव्य ज्ञान तुमसे हम पाकर लोक शिखर चढ़ जाये।
करके आरती विभवसागर जी की.....

* चालीसा *

सम्यक दर्शन शुद्ध हो, सम्यक ज्ञान प्रमाण।
सम्यक चारित्र है महा श्री गुरुवर का जान॥
चालीसा गुरु देव का पढ़े सुने जो आर्य।
भव दुःखो से छूटकर पाये, शिव अनिवार॥

विभव सागर गुरुदेव हमारे, जग, जन मन के हो तुम प्यारे।
किसनपुरा नगर अतिनामी जन्म लिये जगती के स्वामी॥
लखमी चन्द्र जी पिता कहाये जीवन लखने को तुम आये।
माता जी गुलाब बाई कहाई गुलाब जैसा मन हसाई॥
गुरुवर जी तुम गर्भ में आये माता को शुभ स्वपन दिखाये।
प्रथम माह में हाथी देखा, दूंजे में मुनि दर्शन पाये॥
तीजे में पड़गाहन कीना, चौथे में आहार कराये।
तीर्थ वन्दना करती माता, प्रभु दर्शन पाये माता पल पाये॥
पूजा रोज कराती माता जीवन धन्य कराती माता।
पंचम मुनि लोंचन देखा, भरा सरोवर जल है देखा॥
खिले सरोवर कमल हैं पाये माता जी मन में हर्षाये।
दीपावली का शुभ दिन आया, सन्मति जी मन में निर्वाण पाये॥
वर्तमान के वर्द्धमान हो सन्मति के दाता प्रधान हो।
दीपोत्सव की मंगल बेला घर-घर में लग रहा है मेला॥
किसनपुरा के किसन है आये यादव वंशी भी हर्षाये।
कोई किसन कनैया कहता, कोई अशोक भईयाँ कहता॥

कृष्ण लेश को दूर भगाये, शोक रहित करने तुम आये।
मोरा जी सागर में आये, जीवन का निर्णय करवाये॥
निर्णय गुरु का दर्शन पाया मोक्ष मार्ग पर कदम बढ़ाया।
बीना जी सागर भिजवाये, विराग गुरु का दर्शन करवाये॥
मुक्ति की युक्ति को जाना, युक्ति से भुक्ति को त्यागा।
भुक्ति का गुरु त्याग कराये, ब्रह्मचार्य धारण करवाये॥
ब्रह्मचार्य निर्दोष साधना, लेखन चिन्तन शास्त्र वाचना।
गुरुवर जी के मन को भाया, दीक्षा का शुभ भाव जगाया॥
मंगलगिरी भूमि अति प्यारी, महावीर की मूरत धारी।
जीवन मंगल करने तुम आये, क्षुल्लक दीक्षा को तुम पाये॥
भव से पार लगाने आये विभव सागर शुभ नाम है पाये।
काव्य कला के धनी आप हो, लेखन तुम करते विशाल हो॥
ललितपुरी नगरी अतिनामी, लौकान्तिक देवो की भूमि।
अटके सबके काम कराये, अटामन्दिर शुभ नाम कहाये॥
शीत काल की शीतल वायु, जीवन की जितनी है आयु।
निरतीचार साधक को पाया, देवो ने कुछ स्वपन दिखाये॥
गंगन गमन विमान है देखा धवल वर्ण उसका है पाये।
पुष्पवृष्टि मंगल वर्षा सम्यगदृष्टि की शुभ चर्चा॥
देवो की शुभ नगरी आये, देवेन्द्र नगर शुभ नाम है पाये।
मोक्षमार्ग पर कदम बढ़ाये, ऐलक दीक्षा को तुम पाये॥
भिण्ड नगर के भव्य आत्मा, क्षेत्र बरासौ की शुभ भावना।
भिण्ड नगर से गमन कराये, गुरु को एक स्वपने आये॥

एक विसुन्दर मन्दिर देखा, निर्मल जल सरिता को देखा।
मन के मैल को धोते देखा, प्रभु दर्शन को जाते देखा॥
जिन दर्शन निज दर्श कराये, गुरु आज्ञा मुनि दीक्षा पाये।
महाराष्ट्र की महा भावना, गुरुदेव की देखो प्रभाना॥
छः अप्रैल दो हजार पाँच है आया, बाहुबली का दर्शन पाया।
देवो ने अभिषेक दिखाया, चातुर्मास गोमटेश कराया॥
कुन्दकुन्द के कुन्दन तुम हो विराग गुरु के नन्दन तुम हो।
हो गुरुवर तुम जग हितकारी पार लगा दो नैया हमारी॥
तप साधन से तपते रहते तपस्वीयों का दर्शन करते।
सन्मति गुरु का दर्शन पाया, वात्सल्य को तुमने पाया॥
निज यात्रा के पथ पर बढ़ते, जिनदर्शन को प्रतिपल करते।
ऐसे गुरु को शीश नवाऊँ, सिद्ध परम पद मैं पा जाऊँ॥

वर्तमान वर्द्धमान को नमो त्रियोग सम्भाल।
सिद्ध परम पद प्राप्त हो, मंगलमय हो जाये॥
मंगलता को पाये॥

❋❋❋❋❋

22 परिषह

समता से परिषह सहें, वे मुनिवर कहलाय.
ऐसे मुनिवर धन्य हैं, जिन आगम बतलाय।

क्षुधा वेदना को सहें, वे मुनिवर कहलाय.
और पिपासा को सहें, जिन आगम बतलाय॥

शीत वेदना को सहें, वे मुनिवर कहलाय.
उष्णता वेदना सहें, जिन आगम बतलाय।

दशमक परिषह सहें, वे मुनिवर कहलाय.
और नग्नता को सहें, जिन आगम बतलाय।

अरति परिषह को सहें, वे मुनिवर कहलाय.
और स्त्री परिषह सहें, जिन आगम बतलाय।

चर्या परिषह को सहें, वे मुनिवर कहलाय.
और विषधा को सहें, जिन आगम बतलाय।

शय्या परिषह को सहें, वे मुनिवर कहलाय.
और क्रोध को जो सहें, जिन आगम बतलाय।

वध परिषह को जीतते, वे मुनिवर कहलाय.
और याचना ना करें, जिन आगम बतलाय।

अलाभ परिषह को सहें, वे मुनिवर कहलाय.
तथा रोग परिषह सहें, जिन आगम बतलाय।

तृण स्पर्श परिषह सहें, कहलायें मुनिराज.
ऐसे मुनिवर के चरण, सदा नवावत माथ।

मल क्षेपण परिषह सहें, वे मुनिवर कहलाय.
अज्ञान परिषह को जो सहें, जिनवाणी मन लाय।

गाली निन्दा को सहें, है ऐसे मुनिराज.
पूजा और प्रशंसा से, रहे दूर मुनिराज।

पुरुस्कार सत्कार से, दूर रहें मुनिराज.
ऐसे मुनिवर के चरण, सदा नवावत माथ।

अहंकार अभिमान से, दूर रहें मुनिराज.
गुरुवर के गुण गान कर, सदा नवावत माथ।

जिन आगम मुनिराज का, यह स्वरूप बतलाय.
श्रद्धा कर चिन्तन करो, जिन आगम मन लाय।

अदर्शन परिषह को सहें, वे मुनिवर कहलाय.
बाईस परिषह का वर्णन, जिन आगम बतलाय।

गुक्ल ध्यान तलवार से, कर्मो पर जय पाय.
मुक्ति के साम्राज्य को, मुनिवर प्राप्त कराय।

प्रभु चरणों की छाव को, जो रोगी पा जाय.
दु:ख रूपी संसार से, दूर-दूर हो जाय।

जीव आत्मा के लिए, यह समुद्र संसार.
प्रभु के चरण जहाज ही, कर सकते भव पार।

भव्य जीव प्रभु चरण को, अपने मन मैं ध्याय.
यह समुद्र संसार भी, खुर समान रह जाय।

प्रभु चरणों के ध्यान से, क्लेश भाव मिट जाय.
मोह भाव मिट जात ही, आत्म भाव प्रकटाय।